



2026:AHC-LKO:21704

इलाहाबाद उच्च न्यायालय, लखनऊ

अनुच्छेद 227 के अंतर्गत वाद संख्या: 1130/2026

राम लाली

.....याचिकाकर्ता

बनाम्

राम सागर मिश्रा

.....प्रतिवादी

याचिकाकर्ता(ओं) के अधिवक्ता : अमित कुमार सिंह, आकाश सिंह

प्रतिवादी(ओं) के अधिवक्ता : धीरेंद्र कुमार मिश्रा, ऋषि देव मिश्रा

न्यायालय सं० - 5

माननीय न्यायमूर्ति आलोक माथुर,

1. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता श्री अमित कुमार सिंह और प्रतिवादी के अधिवक्ता श्री धीरेंद्र कुमार मिश्रा को सुना गया।
2. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि उन्होंने सिविल जज (जूनियर डिवीज़न), सुल्तानपुर के समक्ष स्थायी निषेधाज्ञा के लिए एक सिविल वाद दायर किया था, जिसमें प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता की भूमि के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने की प्रार्थना की गई थी।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

3. यह बताया गया है कि यह वाद दि० 14.07.1995 को दाखिल किया गया था। यह वाद सिविल जज (जूनियर डिविजन), साउथ, न्यायालय सं० 24, सुल्तानपुर के सामने विचाराधीन था और बाद में इसे न्यायालय सं० 30 में ट्रांसफर कर दिया गया था। जब वाद दि० 11.12.2007 को लिस्ट किया गया, तो याचिकाकर्ता की तरफ से कोई पेश नहीं हुआ और नतीजतन, अभियोजन की कमी के कारण वाद खारिज कर दिया गया।
4. लगभग ढाई साल की देरी के बाद दि० 13.07.2010 को याचिकाकर्ता ने सी०पी०सी० के आदेश IX नियम 9 के तहत पुनर्स्थापना के लिए एक प्रार्थना पत्र दिया था। प्रत्यर्थी/प्रतिवादी ने पुनर्स्थापना के लिए प्रार्थना पत्र का विरोध किया था और अपनी आपत्तियां दर्ज की थीं। विचारण न्यायालय ने दि० 30.05.2025 के आदेश के ज़रिए पुनर्स्थापना के लिए प्रार्थना पत्र यह कहते हुए खारिज कर दिया कि याचिकाकर्ता के पति खुद एक अधिवक्ता थे और उन्हें इस वाद में तय तारीख के बारे में पता होना चाहिए था।
5. यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ता का यह आधार कि उन्हें केस के स्थानांतरण के बारे में पता नहीं था और इसलिए वे पेश नहीं हो सके, ऊपर बताए गए कारणों से विश्वास करने लायक नहीं था, इसलिए पुनर्स्थापना के लिए प्रार्थना पत्र खारिज कर दिया गया।
6. दि० 30.05.2025 के आदेश से संतुष्ट न होकर याचिकाकर्ता ने जिला जज, सुल्तानपुर के सामने पुनरीक्षण वाद दाखिल किया था। जिला जज, सुल्तानपुर ने भी पूरे तथ्य पर फिर से विचार किया है और सिविल जज (जूनियर डिविजन) के दि० 30.05.2025 के आदेश की पुष्टि की है और पुनरीक्षण को खारिज कर दिया है।
7. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कहा है कि बेशक, वाद दि० 11.12.2007 को अभियोजन की कमी के कारण खारिज कर दिया गया था और आदेश वापसी का मुख्य कारण यह

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

था कि उनके द्वारा नियुक्त किया गया अधिवक्ता संबंधित तारीख को कोर्ट के सामने पेश नहीं हुआ और न ही उसने याचिकाकर्ता को उस वाद की प्रगति के बारे में बताया।

8. उन्होंने कहा है कि नीचे की दोनों अदालतों ने तथ्यों को गलत तरीके से समझा है और मामले का फैसला सिर्फ इस बात पर विचार करके किया है कि पैरवी याचिकाकर्ता के पति द्वारा की जा रही थी, जो खुद सुल्तानपुर के विचारण न्यायालय में अधिवक्ता हैं और इस अनुमान पर कि इन हालात में याचिकाकर्ता विचारण न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता की अर्जी खारिज करने से पहले की कार्यवाही के बारे में पता होना चाहिए था। इसलिए, यह प्रार्थना की गई है कि दोनों विवादित आदेशों को रद्द कर दिया जाए और मुकदमे की कार्यवाही को उसके मूल संख्या पर बहाल किया जाए।

9. प्रतिवादियों के अधिवक्ता ने रिट याचिका का कड़ा विरोध किया है। उन्होंने विचारण न्यायालय और पुनरीक्षण न्यायालय के सामने उठाई गई दलीलों को फिर से दोहराया है और यह भी कहा है कि याचिकाकर्ता का यह आधार कि उन्हें इस बात की जानकारी नहीं थी कि वाद की कार्रवाई फरवरी, 2007 में दूसरी कोर्ट में स्थानांतरित कर दी गई है, गलत है क्योंकि याचिकाकर्ता की तरफ से दि० 21.07.2007 और दि० 20.09.2007 को पेशी हुई थी और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि उन्हें केस के दूसरी कोर्ट में स्थानांतरण होने की जानकारी नहीं थी और इसलिए उन्होंने रिट याचिका को खारिज करने की अपील की है।

10. मैंने पक्षकारों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख देखा है।

11. यह देखा गया है कि आदेश वापसी के लिए प्रार्थना पत्र ढाई साल बाद दि० 13.07.2010 को फाइल किया गया था। आदेश वापसी के लिए उस प्रार्थना पत्र में यह कहा गया है कि देरी जानबूझकर नहीं हुई है, बल्कि ऐसे कारणों से हुई है जो वादी/याचिकाकर्ता के नियंत्रण से बाहर थे। यह जोर देकर कहा गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा चुना किया

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

गया पिछला अधिवक्ता न तो विचारण न्यायालय के सामने पेश हुआ और न ही उसने याचिकाकर्ता के पति या याचिकाकर्ता को इस बात की जानकारी दी कि मुकदमा अभियोजन की कमी के कारण खारिज कर दिया गया है।

12. दोनों आदेश को देखने पर यह पता चला है कि इस बात पर बहुत ज़ोर दिया गया था कि याचिकाकर्ता के पति एक वरिष्ठ अधिवक्ता हैं और इसलिए उन्हें वाद के लंबित होने और सूचीबद्ध होने के बारे में पता होना चाहिए था और इन हालात में, यह नहीं माना जा सकता कि याचिकाकर्ता को वाद की प्रगति के बारे में पता नहीं था।

13. प्रार्थना पत्र में कहा गया था कि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने उन्हें वाद खारिज होने के बारे में नहीं बताया और दि० 12.07.2010 को जब काफी समय बाद उन्होंने अभिलेख देखे तो उन्हें दि० 11.12.2007 के आदेश के बारे में बताया गया और उसके तुरंत बाद उन्होंने वाद वापस लेने के लिए प्रार्थना पत्र दिया।

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **कुमारी साहू बनाम भुबनानंद साहू एंड ऑर्स.** (एस०एल०पी० (सिविल) सं० 2443 of 2024) में नीचे दिये गये अनुसार आयोजित किया है :-

“ 11. हम यहां **रफीक और अन्य बनाम मुंशीलाल और अन्य, 1981 (2) एस०सी०सी० 788**, मामले से एक अनुच्छेद प्रस्तुत करना प्रासंगिक पाते हैं, जिसमें अधिवक्ता की गलती के कारण देरी के बारे में बहुत ही समान तथ्यात्मक आव्यूह था, निम्नलिखित देखा गया था:

“3. इस वाद की परेशान करने वाली बात यह है कि हमारे मौजूदा कानूनी व्यवस्था में, जहाँ पक्षकार आम तौर पर अपने अधिवक्ताओं के ज़रिए पेश होते हैं, पक्षकारों की ज़िम्मेदारी है कि वे अपना अधिवक्ता चुनें, उसे जानकारी दें, उसके द्वारा माँगी गई फीस दें और फिर बाकी काम करने के लिए पढ़े-लिखे अधिवक्ता पर भरोसा करें।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पक्षकार गाँव का हो सकता है या किसी ग्रामीण इलाके का हो सकता है और उसे न्यायालय की प्रक्रिया की कोई जानकारी नहीं हो सकती है। अधिवक्ता रखने के बाद, पक्षकार को पूरा भरोसा रह सकता है कि अधिवक्ता उसके फायदे का ध्यान रखेगा। अपील की सुनवाई के समय, पक्षकार का खुद पेश होना न सिर्फ़ ज़रूरी नहीं है, बल्कि शायद ही काम का हो। इसलिए, पक्षकार ने कार्यवाही में असरदार तरीके से हिस्सा लेने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दी है, इसलिए वह निश्चित हो सकता है कि उसे न तो यह पूछने के लिए उच्च न्यायालय जाना पड़ेगा कि उसकी अपील के बारे में उच्च न्यायालय में क्या हो रहा है, और न ही उसे अधिवक्ता पर नज़र रखने की ज़रूरत है कि जब मामला सूचीबद्ध हो तो वह उसमें पेश हो। यह उसके काम का हिस्सा नहीं है। श्री ए0के0 सांघी ने कहा कि इलाहाबाद हाई कोर्ट में अधिवक्ता के बीच एक रिवाज बन गया है कि जब उन्हें कोई खास बेंच पसंद नहीं आती तो वे गैरहाजिर रहते हैं। शायद, हमें नहीं पता, उन्हें इस मामले में ज़्यादा जानकारी है। इस बारे में जानकारी न होना ही हमारा सुख है। *अगर हम इस मामले को खारिज करके इस कथित प्रथा पर अपनी मुहर नहीं भी लगाते हैं, जिससे ऐसी आदत को रोका जा सकता है, तो क्या इससे न्याय वितरण प्रणाली की बदनामी नहीं होगी? उस पक्षकार की क्या गलती है जिसने अपनी पूरी ताकत लगाकर अपने अधिवक्ता की गलती की वजह से नुकसान उठाया? अगर हम इस अपील को खारिज कर देते हैं, जैसा कि श्री ए.के. सांघी ने हमें करने के लिए कहा था, तो सिर्फ़ उस अधिवक्ता को नुकसान नहीं होगा जो पेश नहीं हुआ, बल्कि उस पक्षकार को होगा जिसके हितों की वह वकालत कर रहा था। जो समस्या हमें परेशान कर रही है, वह यह है कि क्या यह सही है कि पक्षकार को अपने एजेंट की निष्क्रियता, जानबूझकर की गई चूक या गलत काम के लिए नुकसान उठाना पड़े। जवाब साफ़ तौर पर 'नहीं' में है। हो सकता है कि अधिवक्ता जानबूझकर या जानबूझकर गायब हो गया हो। हमारे पास मामले के उस पहलू को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं है। हम मामले के उस पहलू पर और कुछ नहीं कहेंगे। हालांकि, हम एक बेगुनाह पार्टी के पक्षकार नहीं हो सकते, जिसे सिर्फ़ इसलिए अन्याय सहना पड़ रहा है क्योंकि उसके चुने हुए अधिवक्ता ने गलती की है। इसलिए, हम इस अपील को स्वीकार करते हैं, और उच्च न्यायालय के उस आदेश को खारिज करते हैं जिसमें अपील खारिज की गई थी और उस आदेश को वापस लेने से इनकार किया गया था।*

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हम निर्देश देते हैं कि अपील को उच्च न्यायालय में उसके मूल संख्या पर वापस लाया जाए और कानून के अनुसार निपटाया जाए। अगर कब्जे पर रोक लगती है, तो यह उच्च न्यायालय द्वारा मामले के निपटारे तक जारी रहेगी। सवाल यह है कि यहां प्रत्यर्थी का खर्च कौन देगा। क्योंकि हमें लगता है कि पक्षकार ज़िम्मेदार नहीं है क्योंकि उसने वह सब किया जो मुमकिन था और जो उसके बस में था, इसलिए Rs 200 का खर्च उस अधिवक्ता से वसूला जाना चाहिए जो गैरहाज़िर था। उस आदेश को लागू करने का अधिकार उस पक्षकार के पास है जिसका प्रतिनिधित्व श्री ए.के. सांघी कर रहे हैं।”

(ज़ोर दिया गया)

12. भले ही ऊपर बताया गया निर्णय विधि वर्ष 1981 का है, हम इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि ज़मीनी हकीकत यह है कि बहुत सारे वाद लड़ने वाले पूरी तरह से अपने अधिवक्ता पर निर्भर हैं, खासकर उन इलाकों में जहाँ आर्थिक और पढ़ाई-लिखाई की स्थिति कम है।”

15. इस न्यायालय को याचिकाकर्ता के इस रुख पर शक करने के लिए कोई सबूत नहीं मिला कि उनके अधिवक्ता ने उन्हें वाद की प्रगति के बारे में सूचित नहीं किया और यह तथ्य कि वाद दि० 11.12.2007 को अभियोजन की कमी के कारण खारिज कर दिया गया था। सिर्फ इसलिए कि याचिकाकर्ता का पति विचारण न्यायालय में वरिष्ठ अधिवक्ता है, यह पक्का नतीजा नहीं निकाला जा सकता कि उन्हें वाद की प्रगति के बारे में पता होना चाहिए था। इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय को लगता है कि वह एक वरिष्ठ फौजदारी अधिवक्ता है और शायद सिविल जज के सामने सिविल मामले में पेश नहीं होते, जहां केस की कार्यवाही लंबित थी।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

16. इसलिए, ऊपर बताए गए हालात में, सिविल जज (जूनियर डिवीज़न), सुल्तानपुर और पुनरीक्षण न्यायालय, दोनों के द्वारा निकाला गया नतीजा साफ़ तौर पर गलत, गैर-कानूनी और मनमाना है और इसमें दखल देने की ज़रूरत है।

17. उपरोक्त परिस्थितियों के लिए, रिट याचिको मंज़ूर की जाती है। दि० 17.12.2025 और दि० 30.05.2025 के विवादित आदेश रद्द किए जाते हैं। वाद सं० 701/1995 में याचिकाकर्ता द्वारा आदेश IX नियम 9 सी०पी०सी० के तहत दिये गए प्रार्थना पत्र को अगले दो हफ़्तों के अंदर प्रतिवादी को रु 5000/- रुपये के खर्च पर मंज़ूर किया जाता है। विचारण न्यायालय को निर्देश दिया जाता है कि वह वाद की कार्यवाही में आगे बढ़े और कानून के मुताबिक इसे तेज़ी से खत्म करे।

18. पक्षकार अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में सहयोग करने का वचन देते हैं, और अधीनस्थ न्यायालय अनावश्यक रूप से कार्यवाही स्थगित नहीं करेगी।

26 मार्च, 2026

(न्यायमूर्ति आलोक माथुर)

रवी

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।